International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
Impact Factoe-3.866
Volume 3, Issue 10, October 2016 ISSN(O): (2349-4085)
ISSN(P): (2394-4218)
©ASSOCIATED Asia Research Foundation
Website- www.aarf.asia, Email : editoraarf@gmail.com

वैदिक वांग्मय मे पर्यावरण चिंतन

डाॅ राज्यश्री मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर संस्कृत,
महात्मा गांधी बालिका विद्यालय (पी.जी.)कालेज फिरोजाबाद

सार

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन का इतिहास अत्यंत प्राचीन और समृद्ध है। इसका मूल हमें वैदिक वांग्मय में मिलता है, जो न केवल धार्मिक और दार्शनिक विचारों का भंडार है, बल्कि प्रकृति और पर्यावरण के प्रति एक गहन सम्मान और समझ को भी दर्शाता है। वेदों में प्रकृति के विभिन्न तत्वों – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश – को देवत्व प्रदान किया गया है और उन्हें जीवन के आधार के रूप में देखा गया है। [1] वैदिक ऋषियों ने प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व के महत्व को गहराई से समझा था और अपने मंत्रों, सूक्तों और कर्मकांडों के माध्यम से इसे व्यक्त किया था। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, ये चार वेद भारतीय ज्ञान परंपरा के मूल स्तंभ हैं। इनमें ऐसे अनेक मंत्र और सूक्त हैं जो पर्यावरण के प्रति गहरी आस्था और संरक्षण की भावना को उजागर करते हैं। पृथ्वी को 'माता' (भूमिर्मता) कहकर संबोधित किया गया है, जो उसके पोषण और जीवनदायिनी शक्ति को दर्शाता है। अथर्ववेद में एक पूरा सूक्त (भूमि सूक्त) पृथ्वी की महिमा, उसकी उर्वरता और उसके सभी प्राणियों के प्रति उदारता का वर्णन करता है। इसमें पृथ्वी को न केवल भौतिक संसाधन के रूप में देखा गया है, बल्कि एक जीवंत के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है, जिससे किसी भी प्रकार की हिंसा या शोषण अनुचित माना गया है। [2]

मुख्य शब्द

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

भूमिका

वैदिक कर्मकांडों और यज्ञों में भी पर्यावरण संरक्षण का संदेश निहित है। यज्ञों में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों, अनाजों और औषधीय पौधों का उपयोग किया जाता था, जो प्रकृति के प्रति कृतज्ञता और उसके संसाधनों के उचित उपयोग का प्रतीक था। वृक्षों और वनों को पवित्र माना जाता था और उन्हें काटने से बचने के नियम थे। 'अरण्यनी' सूक्त में वनों की सुंदरता, शांति और औषधीय महत्व का वर्णन किया गया है, जो प्रकृति के संरक्षण के प्रति वैदिक दृष्टिकोण को स्पष्ट करता है।

वैदिक चिंतन में मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका एक अभिन्न अंग माना गया है। मनुष्य को अन्य जीवों और प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर रहने का उपदेश दिया गया है। यह माना जाता था कि प्रकृति का शोषण करने से असंतुलन पैदा होता है, जिसके नकारात्मक परिणाम मानव जीवन और पर्यावरण दोनों के लिए हानिकारक होते हैं।

जल का वैदिक साहित्य में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। इसे जीवन का सार माना गया है आप: एव सर्वम [3] और 'आपः' (जल) को देवताओं के समान पवित्र माना गया है। नदियों को माँ के रूप में पूजा जाता था और उनकी स्वच्छता और प्रवाह को बनाए रखने का महत्व बताया गया था। सिंधु, सरस्वती, गंगा, यमुना जैसी नदियों का उल्लेख वेदों में बार-बार आता है, जो उनके सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक महत्व को दर्शाता है। जल के दुरुपयोग और प्रदूषण के प्रति सतर्कता वैदिक चिंतन का अभिन्न अंग था।वैदिक मन्त्रों में जल के लिए अमृत शब्द का प्रयोग हुआ है जो जल की पूर्ण शुद्धता को इंगित करता है। अमृतं वा एतस्मिन लोके यद्र आपः [4] प्रकृति के औषधीय तत्वों से परिपूर्ण पवित्र जल जीवन आधायक एवं सर्वरोगों के नाशक होते हैं शतपथ ब्राहमण में जलों को औषधियों का सार रस कहा गया है- अपामेव औषधीनां रसो यत्पयः [5]

अग्नि, वायु और आकाश को वैदिक देवताओं के रूप में पूजा जाता, जो प्रकृति के इन मूलभूत तत्वों के प्रति सम्मान और उनकी शक्तियों की स्वीकृति को दर्शाता है। अग्नि को ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत माना गया,तैत्तिरीय ब्राह्मण में अग्नि को प्रथम देवता माना गया है [6] वायु को जीवनदायिनी शक्ति के रूप में देखा गया और प्राणाद वायु [7] आकाश को अनंत विस्तार और सभी जीवों के आश्रय के रूप में समझा गया। इन देवताओं की स्तुतियाँ न केवल उनकी शक्तियों का बखान करती हैं, बल्कि उनके संतुलन और सामंजस्य के महत्व को भी दर्शाती हैं।

उपनिषदों में भी पर्यावरण चिंतन के गहरे सूत्र मिलते हैं। 'ईशावास्योपनिषद' का यह प्रसिद्ध मंत्र – 'ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥' – संपूर्ण जगत में ईश्वर के व्याप्त होने की बात करता है और त्यागपूर्वक उपभोग करने तथा किसी के धन का लोभ न करने का उपदेश देता है। यह मंत्र अप्रत्यक्ष रूप से प्रकृति के संसाधनों के सीमित होने और उनके न्यायसंगत उपयोग के महत्व को दर्शाता है। वैदिक वांग्मय में पर्यावरण चिंतन केवल दार्शनिक या धार्मिक अवधारणा तक सीमित नहीं था, बल्कि यह जीवनशैली और सामाजिक मूल्यों का भी हिस्सा था। प्रकृति के प्रति सम्मान, संसाधनों का संयमित उपयोग, जीवों के प्रति करुणा और सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व वैदिक संस्कृति के मूल सिद्धांत थे।

ऋग्वेद, भारतीय संस्कृति और ज्ञान की प्राचीनतम आधारशिला है। यह न केवल धार्मिक स्तोत्रों का संग्रह है, बल्कि इसमें तत्कालीन समाज, संस्कृति और पर्यावरण के प्रति उनके दृष्टिकोण का भी चित्रण मिलता है। ऋग्वेद के अनेक सूक्तों में प्रकृति के विभिन्न तत्वों - पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, सूर्य, वनस्पति और जीव-जंतुओं के प्रति गहरी श्रद्धा और व्यक्त सम्मान व्यक्त किया गया है। यह दर्शाता है कि वैदिक ऋषियों में पर्यावरण के प्रति एक विकसित चिंतन मौजूद था।

ऋग्वेद में प्रकृति के प्रत्येक तत्व को देवता के रूप में देखा गया है और उनकी स्तुति में अनेक मंत्र रचे गए हैं। पृथ्वी को 'माता' (भूमिर्मता) और आकाश को 'पिता' (द्यौष्पिता) कहा गया है। नदियाँ, जैसे सिंधु और सरस्वती, देवियों के रूप में पूजी जाती थीं। अग्नि को यज्ञ का केंद्रीय देवता माना जाता था, जो मनुष्य और देवताओं के बीच मध्यस्थ का कार्य करता था। वायु को जीवनदायिनी शक्ति के रूप में सम्मानित किया गया है। सूर्य को ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत मानकर उसकी उपासना की जाती थी। यह देवत्व का आरोपण मात्र धार्मिक कर्मकांड नहीं था, बल्कि प्रकृति के प्रति सम्मान और उसके महत्व का प्रर्दशन था। वैदिक ऋषि यह मानते थे कि प्रकृति की शक्तियाँ जीवन को बनाए रखने और समृद्ध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, इसलिए उनका संरक्षण और संतुलन आवश्यक है।

साहित्य की समीक्षा

वेदो में पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के महत्व पर भी जोर दिया गया है। अनेक मंत्रों में ऐसी कामना की गई है कि पृथ्वी, जल, वायु और वनस्पति शुद्ध और हानिकारक तत्वों से मुक्त रहें। यजुर्वेद में कहा गया है कि 'अंतरिक्ष शांतिप्रद हो, पृथ्वी शांतिप्रद हो, जल शांतिप्रद हों, औषधियाँ शांतिप्रद हों, वनस्पतियाँ शांतिप्रद हों,

समग्र सृष्टि शांतिप्रद हो।' यह कामना पर्यावरण के सभी घटकों के बीच सामंजस्य और संतुलन की आवश्यकता को दर्शाती है। [8]

ऋग्वेद प्रत्यक्ष रूप से संसाधनों के अंधाधुंध दोहन की निंदा नहीं करता, लेकिन प्रकृति के प्रति सम्मान का भाव यह संकेत देता है कि वैदिक समाज संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने की अवधारणा से परिचित था। प्रकृति को माता के समान मानने का अर्थ है कि उसके संसाधनों का उपयोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाए, न कि लालच या अत्यधिक उपभोग के लिए।

ऋग्वेद में वनस्पति और जीव-जंतुओं के महत्व को भी स्वीकार किया गया है। वनों को 'अरण्यानी' (वन की देवी) के रूप में संबोधित किया गया है और उन्हें समृद्धि और आश्रय का स्रोत माना गया है। अनेक मंत्रों में औषधीय पौधों और जड़ी-बूटियों का उल्लेख है, जो उनके चिकित्सीय महत्व को दर्शाता है। आयुर्वेद का सम्पूर्ण ग्रंथ वनस्पति की चेतना का अद्भुत उदहारण है | पशुधन, जैसे गाय और घोड़े, आर्थिक और सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण थे और उनकी रक्षा पर बल दिया जाता था। पर्यावरण का अभिन्न अंग कहे जाने वाले विराट् प्राणि जगत् की विविधिता की तरफ भी वेद हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं और उनके रक्षण, पोषण और संवर्धन की समीक्षा पर बल देते हैं[3]

ऋग्वेद में व्यक्त पर्यावरण चिंतन आधुनिक पर्यावरणवाद की तरह व्यवस्थित और विस्तृत नहीं है, लेकिन इसमें प्रकृति के प्रति गहरा सम्मान, उसके विभिन्न तत्वों के महत्व की समझ और पर्यावरण संतुलन बनाए रखने की चेतना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वैदिक ऋषियों का प्रकृति को देवत्व प्रदान करना और उसकी स्तुति करना, संसाधनों के प्रति सम्मान का भाव और सभी जीवों के कल्याण की कामना, यह दर्शाते हैं कि प्राचीन भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण के बीज मौजूद थे। आज जब हम पर्यावरण संकट का सामना कर रहे हैं, तो ऋग्वेद के इन पर्यावरणीय विचारों से प्रेरणा लेकर हम प्रकृति के साथ संबंध स्थापित कर सकते हैं। [4]

वैदिक वांग्मय मे पर्यावरण चिंतन

यजुर्वेद भारतीय संस्कृति और ज्ञान का एक महत्वपूर्ण स्तंभ है। यह न केवल धार्मिक अनुष्ठानों और यज्ञों का मार्गदर्शन करता है, बल्कि इसमें जीवन के हर पक्ष से संबंधित गहरा चिंतन भी मिलता है। पर्यावरण के प्रति यजुर्वेद का दृष्टिकोण अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है, जो वर्तमान समय में पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर रही मानवता के लिए एक मार्गदर्शक सिद्धांत प्रस्तुत करता है।

यजुर्वेद में प्रकृति के विभिन्न तत्वों - पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश - को देवत्व प्रदान किया गया है। इन तत्वों को पूजनीय और पवित्र माना गया है, जो इस बात का प्रतीक है कि हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने प्रकृति के महत्व और उसकी अपरिहार्यता को भलीभांति समझा था। यजुर्वेद के कई मंत्र प्रकृति के इन तत्वों की स्तुति करते हैं और उनके संतुलन को बनाए रखने की प्रार्थना करते हैं।

यजुर्वेद में पृथ्वी को माता के समान माना गया है, जो सभी प्राणियों का पोषण करती है। इसे 'वसुंधरा' अर्थात् धन और संपदा को धारण करने वाली कहा गया है। यजुर्वेद (5.9) में पृथ्वी से प्रार्थना की गई है कि वह हमें साधनहीनता और पीड़ा से बचाए। यह मंत्र पृथ्वी के प्रति सम्मान और उसकी सुरक्षा के महत्व को दर्शाता है। जल को जीवन का आधार माना गया है। यजुर्वेद में जल की पवित्रता और उसकी जीवनदायिनी शक्ति का वर्णन मिलता है। 'मा आपो हिंसी:' (यजुर्वेद) अर्थात् 'जल को नष्ट मत करो' का स्पष्ट आदेश जल संरक्षण के महत्व को दर्शाता है। आज जब विश्व जल संकट का सामना कर रहा है, यजुर्वेद का यह संदेश अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अग्नि को ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत माना गया है। यजुर्वेद में अग्नि को यज्ञों का केंद्रीय तत्व माना जाता है, जो पर्यावरण को शुद्ध करने और सकारात्मक ऊर्जा का संचार करने का प्रतीक है। अग्निहोत्र जैसे अनुष्ठानों में औषधीय जड़ी-बूटियों की आहुति वायुमंडल को शुद्ध करने का एक प्राचीन वैज्ञानिक तरीका है, जिसका उल्लेख यजुर्वेद में मिलता है। वायु को प्राणवायु और जीवन शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। यजुर्वेद में शुद्ध और स्वस्थ वायु की कामना की गई है। यह माना जाता है कि वायु में किसी भी प्रकार का प्रदूषण न केवल मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, बल्कि पूरे पारिस्थितिकी तंत्र के लिए खतरा है।

आकाश को अनंत और सभी तत्वों का आश्रय माना गया है। यजुर्वेद में आकाश की शांति और उसकी विशालता का वर्णन मिलता है। यह हमें प्रकृति के विराट स्वरूप और उसके संतुलन को समझने की प्रेरणा देता है। यजुर्वेद में न केवल प्रकृति के तत्वों की स्तुति की गई है, बल्कि उनके संरक्षण के लिए व्यावहारिक निर्देश भी दिए गए हैं। वृक्षों और वनस्पतियों के महत्व को स्वीकार करते हुए, उन्हें काटने से बचाने और उनका पोषण करने का संदेश दिया गया है। पशु-पक्षियों के प्रति करुणा और सह-अस्तित्व की भावना को प्रोत्साहित किया गया है।

यजुर्वेद का 'शांति पाठ' पर्यावरण चिंतन का सार प्रस्तुत करता है। इसमें सभी लोकों - द्युलोक, अंतरिक्ष लोक, पृथ्वी लोक, जल, औषधियां, वनस्पतियां - और सभी शक्तियों से शांति की प्रार्थना की गई है। यह समग्र शांति की अवधारणा पर्यावरण के सभी घटकों के बीच सामंजस्य और संतुलन के महत्व को दर्शाती है। आज जब मानव अपनी आवश्यकताओं और विकास की अंधी दौड़ में प्रकृति का अंधाधुंध दोहन कर रहा है, तब यजुर्वेद का पर्यावरण चिंतन हमें एक स्थायी और संतुलित जीवन शैली की ओर प्रेरित करता है। यह हमें सिखाता है कि प्रकृति का सम्मान करना, उसके संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना और सभी जीवों के साथ सद्भाव से रहना ही मानव कल्याण का मार्ग है। यजुर्वेद का यह शाश्वत संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना प्राचीन काल में था। हमें इस ज्ञान को आत्मसात कर पर्यावरण संरक्षण की दिशा में सक्रिय कदम उठाने की आवश्यकता है।

सामवेद, भारतीय संस्कृति के चार वेदों में से एक है, जो मुख्य रूप से संगीत और गायन से संबंधित है। हालांकि इसका मुख्य ध्यान आध्यात्मिक और धार्मिक अनुष्ठानों पर केंद्रित है, लेकिन इसमें पर्यावरण के प्रति गहरा चिंतन और सम्मान भी झलकता है। सामवेद के मंत्रों में प्रकृति के विभिन्न तत्वों की महत्ता को स्वीकार किया गया है और उनके साथ सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित करने का संदेश दिया गया है।

सामवेद में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश जैसे प्राकृतिक तत्वों को देवत्व प्रदान किया गया है। उन्हें जीवन के आधार और पोषक के रूप में देखा जाता है। कई मंत्रों में इन तत्वों की स्तुति की गई है और उनसे कल्याण, शांति और समृद्धि की कामना की गई है। उदाहरण के लिए, जल को जीवनदायी और पवित्र माना गया है, और इसकी शुद्धता बनाए रखने का महत्व बताया गया है। सामवेद में वनस्पतियों और जीव जगत के प्रति भी संवेदनशील दृष्टिकोण व्यक्त किया गया है। औषधीय पौधों और वृक्षों का उल्लेख मिलता है, जिनसे स्वास्थ्य और दीर्घायु की कामना की जाती है। पशुधन का भी महत्व दर्शाया गया है, और उनके कल्याण की प्रार्थना की गई है। यह दर्शाता है कि वैदिक ऋषियों को प्रकृति के सभी रूपों के अंतर्संबंध और उनके महत्व का ज्ञान था।

सामवेद के कई मंत्र यज्ञों और अनुष्ठानों से जुड़े हैं। वैदिक काल में यज्ञों को न केवल आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम माना जाता था, बल्कि पर्यावरण की शुद्धि का भी एक तरीका माना जाता था। हवन में प्रयुक्त होने वाली सामग्री और मंत्रों के उच्चारण से वायुमंडल को शुद्ध करने और सकारात्मक ऊर्जा का संचार करने की मान्यता थी। सामवेद का पर्यावरण चिंतन मनुष्य को प्रकृति के साथ संघर्ष करने के बजाय उसके साथ

सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व बनाए रखने का संदेश देता है। यह सिखाता है कि प्रकृति के संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना चाहिए और उसका सम्मान करना चाहिए। यह दृष्टिकोण आधुनिक पर्यावरणवाद के सिद्धांतों के अनुरूप है, जो सशक्त विकास और प्राकृतिक संतुलन के महत्व पर बल देता है। यह प्राचीन ज्ञान आज भी पर्यावरण संरक्षण और स्वस्थ जीवन शैली की दिशा में हमारा मार्गदर्शन करता है|

अथर्ववेद, भारतीय संस्कृति के चार प्रमुख वेदों में से एक है। यह वेद न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान का भंडार है, बल्कि इसमें तत्कालीन समाज के जीवन और चिंतन के विविध अयामो का भी वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति गहरा सम्मान और संवेदनशीलता दिखाई देती है। इसमें ऐसे अनेक मंत्र और सूक्त हैं जो पर्यावरण के महत्व, उसके संरक्षण की आवश्यकता और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन जीने के संदेश देते हैं।

अथर्ववेद में पृथ्वी की माता के रूप में संकल्पना की गई है। [9] प्रसिद्ध पृथ्वी सूक्त (अथर्ववेद 12.1.12) में पृथ्वी की वंदना करते हुए कहा गया है कि यह हमारी माता है और हम इसके पुत्र हैं। इस भावना से प्रेरित होकर, अथर्ववेद में पृथ्वी के सभी तत्वों - पर्वत, नदियाँ, वनस्पति, और जीव-जंतुओं के प्रति आदर का भाव व्यक्त किया गया है।

जल का महत्व अथर्ववेद में स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। इसे जीवन का आधार माना गया है और इसकी शुद्धता बनाए रखने पर बल दिया गया है। अथर्ववेद में जल को अमृत के समान पवित्र और रोगों को दूर करने वाला बताया गया है। नदियों, जलाशयों और वर्षा जल के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए इनको प्रदूषण से बचाने की प्रेरणा दी गई है। वनस्पतियों और वृक्षों का भी अथर्ववेद में महत्वपूर्ण स्थान है। इन्हें जीवनदायी और औषधीय गुणों से भरपूर माना गया है। वनों के संरक्षण और वृक्षारोपण के महत्व को दर्शाते हुए, अथर्ववेद में कहा गया है कि वृक्ष पृथ्वी के आभूषण हैं और ये पर्यावरण को शुद्ध रखते हैं।

वायुमंडल की शुद्धता पर भी अथर्ववेद में ध्यान दिया गया है। शुद्ध वायु को स्वास्थ्य और जीवन के लिए आवश्यक बताया गया है। प्रदूषणकारी तत्वों से वायु को मुक्त रखने और इसे स्वच्छ बनाए रखने के लिए प्रार्थनाएँ की गई हैं। अथर्ववेद में यज्ञों और अनुष्ठानों का भी वर्णन है, जिनमें प्रकृति के विभिन्न तत्वों की पूजा की जाती है। यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय संस्कृति में मनुष्य और प्रकृति के बीच एक अटूट संबंध माना

जाता था। यज्ञों के माध्यम से प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने और पर्यावरण को शुद्ध रखने का प्रयास किया जाता था।

आज जब विश्व पर्यावरण प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन जैसी गंभीर समस्याओं का सामना कर रहा है, अथर्ववेद में निहित पर्यावरण चिंतन हमें प्रकृति के प्रति अपने दृष्टिकोण पर पुनर्विचार करने की प्रेरणा देता है। यह हमें सिखाता है कि प्रकृति का सम्मान करना, उसका संरक्षण करना और उसके साथ सद्भावपूर्ण जीवन जीना मानव अस्तित्व के लिए अत्यंत आवश्यक है। अथर्ववेद का पर्यावरण चिंतन न केवल प्राचीन ज्ञान का भंडार है, बल्कि यह आज के समय में भी पर्यावरण संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण मार्गदर्शक सिद्धांत है।

निष्कर्ष

आज जब विश्व पर्यावरण संकट का सामना कर रहा है, वैदिक वांग्मय में निहित पर्यावरण चिंतन हमें एक स्थायी और संतुलित भविष्य की ओर बढ़ने के लिए महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है। प्रकृति को माता के रूप में देखना, सभी जीवों के प्रति सम्मान रखना, संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना और प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करना – ये वैदिक शिक्षाएँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी प्राचीन काल में थीं। हमें अपने प्राचीन ज्ञान और मूल्यों को पुनर्जीवित करने और उन्हें आधुनिक संदर्भ में लागू करने की आवश्यकता है ताकि हम एक स्वस्थ और टिकाऊ भविष्य का निर्माण कर सकें। वैदिक वांग्मय का पर्यावरण चिंतन न केवल एक ऐतिहासिक विरासत है, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए एक प्रेरणा स्रोत भी है।

संदर्भ

यजुर्वेद,14.20 अग्नि देवता वायु देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता

तैंतरीय संहिता, 3.3.22 पृथ्वी मातरम मा मा हिंसि

गोपथ ब्राह्मण 1.5.15

अत्ले ब्राह्मण 8.20

शतपथ ब्राह्मण 2.8.2.13

तैंतरीय ब्राह्मण 2.4.33

ऐतरेयोपनिषद 1.1.14

यजुर्वेद,36.17

अथर्ववेद, 12.1.12

पर्यावरणीय अध्ययन प्रकाशक प्रखर बुक्स लिमिटेड

वैदिक संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण, डॉ विजय एस सोजीत्रा,

भारतीय संस्कृति धर्म एवं पर्यावरण संरक्षण , डॉ बी.बी.एस कपूर